साप्ताहिक
Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/22-23

Global School Of Excellence, Obedullaganj

वर्ष : 8, अंक : 35 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 19 अप्रैल 2023 से 25 अप्रैल 2023 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

हर साल समुद्रों में जा रहा 80 लाख टन प्लास्टिक कचरा, रोकथाम के लिए सीएसई ने शुरू किए प्रयास

नई दिल्ली। समुद्रों में बढ़ता कचरा एक गंभीर समस्या बनता जा रहा है। हालांकि इसके बावजूद इस पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा रहा। समुद्र से जुड़े 192 देशों से निकला करीब 80 लाख टन प्लास्टिक कचरा हर साल समुद्रों में समा रहा है। यह समस्या किसी एक की नहीं बल्कि सभी देशों की है। भारत जिसकी तटरेखा 7000 किलोमीटर से भी ज्यादा लम्बी है, वो इस खतरे को नियंत्रित करने में एक अहम भूमिका निभा सकता है। यह बातें सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट (सीएसई) की महानिदेशक सुनीता नारायण ने कल संपन्न हुई दो दिवसीय राष्ट्रीय परामर्श कार्यशाला में अपने भाषण के दौरान कही हैं। इस राष्ट्रीय परामर्श कार्यशाला का आयोजन सीएसई द्वारा किया गया था।

गौरतलब है कि सीएसई ने इस कार्यशाला के दौरान भारत में तटीय शहरों के बीच एक राष्ट्रीय गठबंधन की भी शुरुआत की है, जो देश भर में बढ़ते समुद्री कचरे पर ध्यान केंद्रित करेगा। अंतराष्ट्रीय शोधों से पता चला है कि समुद्रों में पहुंचने वाला करीब 80 फीसदी कचरा जमीन पर ठोस कचरे के कुप्रबंधन से जुड़ा है जो भूमि से जुड़े समुद्री मार्गों के जरिए समुद्र तल तक पहुंच रहा है। वहीं बाकी 20 फीसदी कचरा तटीय बस्तियों से समुद्रों में जा रहा है। शोधकर्ताओं की मानें तो समुद्री पारिस्थितिक तंत्र में मिलने वाले इस कचरे का करीब 90 फीसदी हिस्सा प्लास्टिक होता है। इस बारे में सुनीता नारायण का कहना है कि वैश्विक स्तर पर हर वर्ष करीब 46 करोड़ टन प्लास्टिक का उत्पादन होता है, इसमें से करीब 35.3 करोड़ टन प्लास्टिक कचरे के रूप वापस आ रहा है, जबकि करीब 80 लाख टन (2.26 फीसदी) कचरा समुद्र को दूषित कर रहा है। इस बारे में आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) द्वारा हाल ही में जारी रिपोर्ट ग्लोबल प्लास्टिक आउटलुक- पालिसी सिनेरियोज टू 2060 से पता चला है कि 2060 तक हर साल पैदा होने वाला यह प्लास्टिक कचरा अब से करीब तीन गुना बढ़ जाएगा। जो अगले 37 वर्षों में बढ़कर 101.4 करोड़ टन से ज्यादा होगा।

भारतीय समुद्री तट रेखा के हर किलोमीटर में पसरा है 0.98 मीट्रिक टन कचरा इस बारे में सीएसई की सॉलिड वेस्ट मैनेजमेंट यूनिट के कार्यक्रम निदेशक अतीन बिस्वास का कहना है कि, %%दक्षिण एशियाई समुद्रों में कचरे की मात्रा विशेष रूप से चिंता का विषय है। अनुमान बताते हैं कि करीब 15,434 टन प्लास्टिक कचरा हर रोज दक्षिण एशियाई समुद्रों में जा रहा है। यदि एक साल में इसका हिसाब लगाएं तो वो 56.3 लाख टन से भी ज्यादा बैठता है सीएसई से जुड़े शोधकर्ता सिद्धार्थ घनश्याम सिंह ने इस बारे में डाउन टू अर्थ को बताया कि भारत की समुद्र तट रेखा के हर किलोमीटर भाग में 0.98 मीट्रिक टन कचरा पसरा है, जो प्रति वर्ग मीटर करीब 0.012 किलोग्राम है। सीएसई से जुड़े शोधकर्ता सिद्धार्थ घनश्याम सिंह ने इस बारे में डाउन टू अर्थ को बताया कि भारत की समुद्र तट रेखा के हर किलोमीटर भाग में 0.98 मीट्रिक टन कचरा पसरा है, जो प्रति वर्ग मीटर करीब 0.012 किलोग्राम है। उनका कहना है कि भारत में सहायक नदियां ऐसे मार्ग है जो 15 से 20 फीसदी प्लास्टिक कचरे को समुद्रों में डाल रही हैं। वहीं यदि भारत की कुल समुद्री तट रेखा को देखें तो वो 7,517 किलोमीटर लम्बी है जो देश के नौ राज्यों के 66 तटीय जिलों से जुड़ी है। यह क्षेत्र करीब 25 करोड़ लोगों का घर है। इस तटरेखा के किनारे 486 शहर हैं जिनमें से 36 क्लास-द्ध शहर है जिनकी आबादी एक लाख से ज्यादा है। वहीं यदि भारत की कुल समुद्री तट रेखा को देखें तो वो 7,517 किलोमीटर लम्बी है जो देश के नौ राज्यों के 66 तटीय जिलों से जुड़ी है। यह क्षेत्र करीब 25 करोड़ लोगों का घर है। इस तटरेखा के किनारे 486 शहर हैं जिनमें से 36 क्लास शहर है जिनकी आबादी एक लाख से ज्यादा है। इतना ही नहीं यह 12 प्रमुख और 185 छोटे बंदरगाहों की भी मेजबानी करते हैं। आंकड़ों की मानें तो भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मछली उत्पादक देश है जहां मछली पकड़ने की करीब 2.5 लाख नौकाएं हैं। इतना ही नहीं देश में मछुआरों के 3,600 गांव हैं जहां 40 लाख मछुआरे बसते हैं। देश की यह लम्बी समुद्री तट रेखा जैवविविधता से भी समृद्ध है जहां करीब 4,120 किलोमीटर में मैंग्रोव के जंगल हैं। दुनिया भर में समुद्री कचरे से जुड़ी एक और बड़ी समस्या समुद्री जाल, फिशिंग लाइन और हुक हैं। जो या तो मछली पकड़ने के दौरान समुद्र में खो जाते हैं या खराब होने पर ऐसे ही फेंक दिए जाते हैं। यदि भारत की बात करें तो देश में मछली पकड़ने के इस सामान की करीब 1.74 लाख इकाइयां चालू हालत में हैं इनमें से 154,008 इकाइयां गिलनेट/ड्रिफ्टनेट से जुड़ी हैं जबकि 7,285 इकाइयां जाल बनाती हैं। बाकी फिशिंग नेट के निर्माण में लगी हैं। यदि खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) के आंकड़ों की मानें तो देश में हर साल 15,276 टन गिलनेट खप जाता है।

समस्या से निपटने के लिए ठोस कार्रवाई की है दरकार इस बारे में अतीन ने बताया कि, 2021 में समुद्र तटों और समुद्र तल से 58,000 किलोग्राम घोस्ट नेट बरामद किया गया था। यह खतरा कितना बड़ा है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि एक मादा कछुए द्वारा दिए एक हजार अंडों में से केवल 10 ही वयस्क हो पाते हैं, जिसके लिए यह बढ़ता समुद्री कचरा और घोस्ट नेट जिम्मेवार है। समुद्री कचरे के सबसे आम स्रोतों में से एक पर्यटक भी हैं जो तटों पर कचरा डाल रहे हैं। इनमें से अधिकांश कचरा प्लास्टिक, पॉलिस्ट्रीन, कटलरी, कैरी बैग, सिगरेट बट्स जैसे प्लास्टिक से बने उत्पाद होते हैं। यह वो कचरा है जिसे या तो एकत्र नहीं किया जाता या फिर उनका उचित प्रबंधन नहीं होता और आखिरकार वो नहरों, नदियों, नालियों के जरिए महासागरों में समां जाते हैं।

हैरानी की बात है कि भारत में समुद्री कचरे में बड़ी मात्रा में जूते-चप्पल से जुड़ा कचरा भी मिल रहा है। देखा जाए तो इस कचरे में बड़ी मात्रा में मछली पकड़ने का सामान, बाढ़ का पानी, सीवेज, ऑटोमोबाइल और तटों पर पैदा हो रहे औद्योगिक अपशिष्ट के साथ जहाजों को तोड़ने वाले यार्ड से निकला कचरा शामिल है।

ऐसे में अतीन बिस्वास का कहना है कि, समस्या की जटिलता और पैमाने को देखते हुए स्थानीय सरकारों को अपनी योजनाओं में समुद्री कचरे पर प्राथमिकता से ध्यान देने की जरूरत है। इस राष्ट्रीय कार्यशाला में जिन प्रमुख मुद्दों की पहचान की है, उनमें पर्याप्त वैज्ञानिक आंकड़ों का आभाव है। दूसरा इस कचरे के कारणों से जुड़ी संस्थाओं के बीच नीति और व्यवहार में तालमेल की कमी है। साथ ही एक व्यापक संचार रणनीति में निवेश की आवश्यकता है जो नागरिकों, मछुआरा समुदायों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों को एक साथ प्रभावी ढंग से जोड़ सके।

वहीं सिद्धार्थ का कहना है कि चूंकि यह समस्या जमीन पर पैदा हुए प्लास्टिक कचरे और उसके प्रबंधन से जुड़ी है। ऐसे में सिंगल यूज प्लास्टिक पर प्रतिबन्ध करने के साथ इसके निर्माण में लगे उत्पादकों की जिम्मेवारी तय करने के लिए ईपीआर जैसी नीतियों को सख्ती लागू और अमल करने की जरूरत है।

स्कूली शिक्षा से वंचित हैं 24.4 करोड़ बच्चे, लक्ष्य हासिल करने को चाहिए हर साल आठ लाख करोड़ रुपए

न्यूयार्क। संयुक्त राष्ट्र के शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) ने अपनी नई रिपोर्ट में चेतावनी दी है कि यदि आठ लाख करोड़ रुपए (9,700 करोड़ डॉलर) की अतिरिक्त धनराशि न उपलब्ध कराई गई तो बहुत से देश, 2030 तक राष्ट्रीय शैक्षिक लक्ष्यों की हासिल करने में नाकाम हो जाएंगे।

ऐसे में रिपोर्ट में वित्त की तत्काल समीक्षा की भी बात कही है। कैन कन्ट्रीज अफोर्ड देयर नेशनल एसडीजी 4 बेंचमार्क्स? नामक यह रिपोर्ट इस महीने यूनेस्को द्वारा जारी की गई है। रिपोर्ट के मुताबिक यदि महत्वाकांक्षा कम भी कर दें तो भी आर्थिक रूप से कमजोर 79 देशों में 2030 तक शिक्षा से जुड़े लक्ष्यों को हासिल करने के लिए हर साल 9,700 करोड़ डॉलर की दरकार है। इस रिपोर्ट में 2030 के लिए निर्धारित सतत विकास के चौथे लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित किया गया है, जिसका उद्देश्य सभी के लिए बेहतर, समावेशी और समान गुणवत्ता वाली शिक्षा सुनिश्चित कराना है। साथ ही जीवन भर शैक्षिक अवसरों को बढ़ावा देना है। इस रिपोर्ट में जो निष्कर्ष सामने आए हैं उनके अनुसार यदि देशों को अपने शैक्षिक लक्ष्यों को हासिल करना है, तो शिक्षा क्षेत्र के लिए अतिरिक्त धनराशि की आवश्यकता होगी।

रिपोर्ट के मुताबिक इसके लिए अतिरिक्त संसाधनों के आबंटन के अलावा, धनराशि की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए भी रणनीतियों की जरूरत है। पता चला है कि शिक्षा के लिए धन की सबसे ज्यादा किल्लत सब-सहारा अफ्रीका में है। जो करीब 575,718 करोड़ रुपए (7,000 करोड़ डॉलर) प्रतिवर्ष है। इस क्षेत्र में हालात इतने बुरे हैं कि बच्चों को स्कूल जाने के लिए लम्बी दूरी तय करनी पड़ती है। नतीजन प्राइमरी स्कूल की उम्र के करीब 20 फीसदी बच्चे और अपर सेकेंडरी स्कूल जाने योग्य आयु के करीब 60 फीसदी बच्चे स्कूलों से बाहर हैं। रिपोर्ट के अनुसार यदि डोनर अपने संकल्पों को पूरा करें और कमजोर देशों में बुनियादी शिक्षा को प्राथमिकता दें तो पैसे की इस किल्लत के करीब एक तिहाई हिस्से की भरपाई की जा सकती है।

आर्थिक रूप से कमजोर देशों में है शिक्षकों की भारी किल्लत

वहीं यूनेस्को द्वारा सितम्बर 2022 में जारी एक अन्य रिपोर्ट के हवाले से पता चला है कि शिक्षा में मौजूद असमानताओं के चलते अभी भी 24.4 करोड़ बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित हैं। देखा जाए तो इस मामले में सब सहारा अफ्रीका सबसे ऊपर हैं जहां अब थी 9.8 लाख करोड़ बच्चे स्कूली शिक्षा से दूर हैं। यह वो क्षेत्र भी है जहां शिक्षा से दूर इन बच्चों की संख्या लगातार बढ़ रही है। वहीं इस मामले में मध्य और दक्षिण एशिया दूसरे स्थान पर हैं। जहां ऐसे बच्चों की संख्या करीब साढ़े आठ करोड़ है। इस बारे में यूनेस्को की महानिदेशिका ऑड्रे अजूले का कहना है कि इन परिणामों को देखकर लगता है कि संयुक्त राष्ट्र ने 2030 तक सबके लिए बेहतर शिक्षा का जो लक्ष्य निर्धारित किया है उसे हासिल करने पर जोखिम मंडरा रहा है ऐसे में उनके अनुसार शिक्षा को अन्तरराष्ट्रीय एजेंडा में सबसे ऊपर रखने के लिए वैश्विक सक्रियता की जरूरत है। यूनेस्को द्वारा प्रकाशित आंकड़ें सकारात्मक बदलाव को

भी दर्शाते हैं। इन आंकड़ों के मुताबिक दुनिया भर में स्कूली शिक्षा से वंचित लड़के और लड़की के बीच का अंतर अब दूर हो चुका है। जहां 2000 में प्राइमरी स्कूली शिक्षा की उम्र के बच्चों में यह अंतर ढाई फीसदी था वहीं सैकंडरी स्तर की आयु के बच्चों में 3.9 फीसदी रिकॉर्ड किया गया था। अब यह अंतर मिट चुका है। हालांकि इस मामले में क्षेत्रीय स्तर पर कुछ अंतर अब भी मौजूद है। इस रिपोर्ट में जिन अन्य मुद्दों पर प्रकाश डाला है उनमें शिक्षकों का मुद्दा भी शामिल है। रिपोर्ट के मुताबिक 2030 तक निम्न-आय वाले देशों में प्री-प्राइमरी शिक्षकों की संख्या को तिगुना और निम्न-मध्यम आय वाले देशों में दोगुणा करने की जरूरत है। इसी तरह निम्न-आय वाले देशों में प्राइमरी स्कूल टीचर्स की संख्या में करीब 50 फीसदी की वृद्धि करने की जरूरत है। गौरतलब है कि निम्न और निम्न-मध्य आय वाले दो तिहाई देशों ने, 2020 में कोविड महामारी के पहले वर्ष में, सार्वजनिक शिक्षा के खर्च में कटौतियां कर दी थी। कोविड-19 महामारी से शिक्षा में जो बाधाएं पैदा हुई थी उसके प्रभाव अब तक पूरी तरह ज्ञात नहीं है। रिपोर्ट के अनुसार इस लागत में बड़े पैमाने पर बच्चों के सीखने को हुए नुकसान की भरपाई भी शामिल है, जिसने पहले से मौजूद सीखने के संकट को और बढ़ा दिया है। देखा जाए तो बच्चों और किशोरों की केवल आधी आबादी आबादी ऐसे भविष्य के लिए तैयार है जहां उनकी शिक्षा पूरी होगी और पढ़ने में न्यूनतम कुशलता हासिल होगी।

अब जल बजट केरल में करेगा समान जल बटवारा

जल विशेषज्ञों का कहना है कि केरल की इस पहल से पानी की मांग और आपूर्ति व्यवस्था को सुधारने में मदद मिलेगी। केरल सरकार का यह जल बजट इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि राज्य में पिछले कुछ हफ्तों में तापमान में अच्छी खासी बढ़ोतरी हो रही है। इसके चलते राज्य के कई हिस्सों में पानी की किल्लत खड़ी हो गई है। इन्हीं सब बातों के मद्देनजर राज्य सरकार द्वारा लाया गया पहले जल बजट से केरल के निवासियों को अधिक उम्मीद है। हालांकि केरल की हरियाली से हर कोई परिचित है, लेकिन राज्य सरकार का कहना है कि राज्य में 44 से अधिक नदियां, दर्जनों झीलें, तालाब व नहरें हैं और अच्छी बारिश होने के बावजूद राज्य के कुछ इलाकों में गर्मियों में पानी की कमी का सामना करना पड़ता है। ऐसी स्थिति को संतुलित करने के लिए यह जल बजट तैयार किया गया है। केरल के मुख्यमंत्री पिनाराई विजयन ने जल बजट के पहले चरण का विवरण जारी किया है। इसके तहत राज्य के 15 ब्लॉक के 94 ग्राम पंचायतों के लिए यह जल बजट जारी किया गया है। इन ग्राम पंचायतों में पानी की उपलब्धता में कमी दर्ज की गई है। राज्य सरकार का कहना है कि इन ग्राम पंचायतों में इस योजना के समयसीमा के भीतर पूरा होने की उम्मीद है। बजट के माध्यम से स्थानीय स्वशासी संस्थाओं की भागीदारी सुनिश्चित की जाएगी, ताकि बारिश से प्राप्त होने वाले जल का उपयोग कृषि और सिंचाई क्षेत्र में संतुलित तरिके से बटवारा किया जा सके। राज्य की इनि नजन ओझिकत्ते यानी मुझे बहने दो एक ऐसी परियोजना है, जिसमें यह उम्मीद जताई गई है कि जल प्रपातों की धाराओं व नदियों का जीर्णोद्धार किया जाएगा। राज्य सरकार ने पिछले कुछ ही सालों में अब तक 15,119 किलोमीटर लंबे जल मार्गों को पुनजीर्वित किया है। यह जल बजट जल संसाधन विकास एवं प्रबंधन केंद्र और राज्य जल संसाधन के अधिकारियों के साथ-साथ कई विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा तैयार किया गया है। इसमें स्थानीय लोगों की भी भागीदारी सुनिश्चित की गई है। राज्य सरकार का कहना है कि अधिक से अधिक तालाब बनाने और नदियों की धाराओं की रक्षा करने व जल निकायों का कायाकल्प करने का काम स्थानीय निकायों द्वारा किया जा रहा है और अब इन्हीं पर जल बजट को लागू करने की जिम्मेदारी भी सौंपी गई है। राज्य सरकार का कहना है कि राज्य में समान जल वितरण के लिए जल बजट जरूरी हो गया था। साथ ही इससे बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन का उचित इस्तेमाल हो सकेगा। बजट में पानी की कमी वाले क्षेत्रों में उपलब्ध पानी के अनुसार उसके उपयोग को विनियमित किया जाएगा। यह पानी का बजट है। इससे लोगों में अनावश्यक रूप से पानी बर्बाद न करने के बारे में जागरूकता पैदा होगी और इसके माध्यम से पानी बचाने के लक्ष्य को हासिल किया जा सकेगा। साथ ही इससे पानी की बर्बादी पर भी रोक लग सकेगी। ध्यान रहे कि भारत में औसत सालाना बरसात से चार हजार अरब घन मीटर पानी आता है जो देश में ताजा पानी का प्रमुख स्रोत भी है। लेकिन देश के विभिन्न हिस्सों में बारिश की दर अलग-अलग है। भारत में करीब 20 रिवर बेसिन हैं। घरेलू, औद्योगिक और कृषि उपयोग के लिए अधिकांश रिवर बेसिन सूख रहे हैं। देश के विभिन्न हिस्सों में पानी की मांग भी एक जैसी नहीं है। कृषि कार्य में सबसे ज्यादा पानी की खपत होती है। यह 85 प्रतिशत से भी ज्यादा है। बढ़ती आबादी की जरूरतें और तेज आर्थिक गतिविधियां भी पहले से संकट का सामना कर रहे जल स्रोतों पर अतिरिक्त दबाव डाल रही हैं। जल प्रबंधन के लिए देश में कई प्रणालियों का उपयोग हो रहा है, इसके बावजूद बड़ी मात्रा में पानी बहकर समुद्र में चला जाता है।

इलेक्ट्रिक वाहनों के साथ 2050 में 7,513 फीसदी तक बढ़ जाएगी लिथियम की मांग

मुंबई। दुनिया में जैसे इलेक्ट्रिक वाहनों की मांग बढ़ रही है उसके साथ ही बैटरी के लिए लिथियम, निकल, कोबाल्ट और मैंगनीज जैसी महत्वपूर्ण धातुओं की मांग भी बढ़ रही है। अनुमान है कि यदि 2050 तक 40 फीसदी वाहन इलेक्ट्रिक होंगें तो लिथियम की मांग 2,909 फीसदी बढ़ जाएगी। इसी तरह यदि 2050 तक 100 फीसदी वाहन इलेक्ट्रिक हों तो लिथियम की मांग 7,513 फीसदी तक बढ़ जाएगी। ऐसे में क्या हम इस बढ़ती मांग के लिए तैयार हैं यह अपने आप में बड़ा सवाल है। इसमें कोई शक नहीं की इलेक्ट्रिक वाहनों के आने से न केवल पर्यावरण को फायदा होगा साथ ही बढ़ते उत्सर्जन में भी कमी आएगी जो जलवायु में आते बदलावों के दृष्टिकोण से भी फायदेमंद होगा। लेकिन इसके साथ ही हमें लिथियम, निकल, कोबाल्ट और मैंगनीज जैसे महत्वपूर्ण धातुओं की बढ़ती मांग का भी सामना करना होगा। यह जानकारी कॉर्नेल यूनिवर्सिटी से जुड़े वैज्ञानिकों द्वारा किए अध्ययन में सामने आई है, जिसके नतीजे जर्नल नेचर कम्युनिकेशन्स में प्रकाशित हुए हैं। अपने इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने भारत, अमेरिका, चीन सहित 48 देशों से जुड़े आंकड़ों की जांच की है जो इलेक्ट्रिक वाहनों को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

देखा जाए तो दुनिया के सामने जलवायु परिवर्तन एक प्रमुख मुद्दा है। यही वजह है कि ग्लासगो में हुए जलवायु सम्मेलन (कॉप-26) में भी पेरिस समझौते के लक्ष्यों पर बल दिया था। इस सम्मलेन में दुनिया भर के शीर्ष नेताओं ने उत्सर्जन में गिरावट के लिए जीवाश्म ईंधन के उपयोग को चरणबद्ध तरीके से हटाने का आह्वान किया था। देखा जाए तो ट्रांसपोर्ट ऊर्जा क्षेत्र से होने वाले कुल ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में एक चौथाई का योगदान करता है। वहीं इसका तीन-चौथाई उत्सर्जन केवल सड़क यातायात से हो रहा है। ऐसे में यह जरूरी है कि जल्द से जल्द पेट्रोल-डीजल के स्थान पर इलेक्ट्रिक वाहनों को अपनाया जाए। रिसर्च के मुताबिक 2050 तक देश इस बढ़ते उत्सर्जन को कम करने के लिए तेजी से इलेक्ट्रिक वाहनों की ओर रुख करेंगें, इसके चलते आने वाले वक्त में बैटरी-ग्रेड लिथियम, निकल, कोबाल्ट, मैंगनीज और प्लेटिनम की मांग तेजी से बढ़ेगी। लेकिन साथ ही इसकी रह में ने केवल आर्थिक रोड़े, आपूर्ति-श्रृंखला में भी बाधा उत्पन्न होने की आशंका है।

अनुमान है कि 2010 से 2050 के बीच इन 48 देशों में वाहनों की कुल संख्या में करीब 2.7 गुणा इजाफा हो जाएगा। जहां 2010 में वाहनों की कुल संख्या 88 करोड़ थी वो 2050 तक बढ़कर 239 करोड़ पर पहुंच जाएगी। आंकड़ों की मानें तो 2010 यूरोप और अमेरिका में सबसे ज्यादा वाहन थे। जहां यूरोप में वाहनों की संख्या 29 करोड़ और अमेरिका में 25 करोड़ दर्ज की गई थी।

रिसर्च के मुताबिक 2050 तक कुल वाहनों में इनकी हिस्सेदारी में काफी गिरावट आएगी। जहां यूरोप में 2010 में 32 फीसदी हिस्सेदारी घटकर 14 फीसदी रह जाएगी। इसी तरह अमेरिका में जहां 2010 में दुनिया के 28 फीसदी वाहन थे वो घटकर केवल 13 फीसदी रह जाएंगें। इसके वजह विकासशील देशों के वाहन बाजार में तेजी से होती वृद्धि है।

12 फीसदी पर पहुंच जाएगी भारत की हिस्सेदारी

चीन में वाहनों की संख्या 2010 में आठ करोड़ (नौ फीसदी) से बढ़कर 2050 तक 86 करोड़ (36 फीसदी) पर पहुंच जाएगी। इसी तरह भारत में भी इसमें अच्छा-खासी वृद्धि का अनुमान है। पता चला है कि भारत की हिस्सेदारी भी 2010 में दो करोड़ (दो फीसदी) से बढ़कर 2050 में 29 करोड़ (12 फीसदी) पर पहुंच जाएगी। ऐसे में यदि यह देश इलेक्ट्रिक वाहनों की ओर रुख करते हैं तो इन देशों में भी लिथियम, निकल, कोबाल्ट और मैंगनीज जैसे मेटल्स की मांग बढ़ जाएगी। रिसर्च के मुताबिक लिथियम की मांग में 7,513 फीसदी की वृद्धि का अनुमान है। 2010 से 2050 के बीच ऐसे परिदृश्य में जहां सभी वाहन इलेक्ट्रिक हैं, वैश्विक स्तर पर लिथियम की वार्षिक मांग 747 मीट्रिक टन से बढ़कर 22 लाख मीट्रिक टन पर पहुंच जाएगी। देखा जाए तो ऐसे नहीं है कि केवल लिथियम की मांग में ही वृद्धि होगी। आंकड़े दर्शाते हैं कि इसके चलते निकल की मांग भी काफी बढ़ जाएगी। यदि 2050 तक वैश्विक स्तर पर 40 फीसदी वाहन इलेक्ट्रिक होते हैं तो इसकी मांग 20 लाख मीट्रिक टन पर पहुंच जाएगी। वहीं सौ फीसदी इलेक्ट्रिक वाहनों के होने पर यह मांग बढ़कर 52 लाख मीट्रिक टन पर पहुंच जाएगी। इसी तरह कोबाल्ट की वार्षिक मांग भी तीन से आठ लाख मीट्रिक टन के बीच होगी, जबकि मैंगनीज की इसी तरह बढ़कर दो से पांच लाख मीट्रिक टन पर पहुंच जाएगी। विश्व बैंक की मानें तो यह धातुएं और खनिज चिली, कांगो, इंडोनेशिया, ब्राजील, अर्जेंटीना और दक्षिण अफ्रीका में केंद्रित हैं, जहां राजनैतिक अस्थिरता है। ऐसे में इनकी अस्थिर आपूर्ति बढ़ती मांग के साथ आपूर्ति के जोखिम को बढ़ा सकती है। आपकी जानकारी के लिए बता दें कि केंद्र सरकार ने 9 फरवरी, 2023 को जम्मू कश्मीर में 59 लाख टन लिथियम के भंडार मिलने की घोषणा की थी। रिसर्च में शोधकर्ताओं ने भारी वाहनों को इलेक्ट्रिक में बदलने पर भी ध्यान दिया है, जिन्हें अन्य वाहनों की तुलना में इन धातुओं की कहीं ज्यादा जरूरत होती है। हालांकि यह भारी वाहन कुल वाहनों का केवल चार से 11 फीसदी हिस्सा ही हैं। लेकिन भविष्य में इनके द्वारा इन मेटल्स की मांग में अच्छी खासी वृद्धि हो सकती है। ऐसे में शोधकर्ताओं ने इस बढ़ती मांगे को प्रबंधित करने के लिए कई सुझाव दिए हैं, जिनमें सर्कुलर इकोनॉमी को बढ़ावा देना और जो बैटरी अपनी समयावधि पूरी कर चुकी हैं उनसे जरूरी धातुओं को पुन:प्राप्त करना जरूरी है। साथ ही इनके पुनर्चक्रण की दक्षता को बढ़ाना भी काफी मायने रखता है। इसके अलावा देशों को ऐसी नीतियों को अपनानें चाहिए जो प्राथमिक धातुओं पर बढ़ती निर्भरता को कम करने के लिए कैथोड/एनोड और फ्यूल-सेल (ग्रीन हाइड्रोजन) जैसे सिस्टम के लिए वैकल्पिक डिजाइन को प्राथमिकता दें।

भावनाओं का ही एक अंग है वसुधैव कुटुम्बकम्

भावनाओं का ही एक अंग है। वसुधैव कुटुम्बकम् (समस्त वसुधा ही परिवार है) और सर्वे भवन्तु सुखिनः (सभी लोग सुखी हों) की कामना और भावना हमारे यहां सनातन काल से रही है। हम सभी का जीवन, हमारा स्वभाव और कार्य-व्यवहार सभी में सबके लिए सुख, शांति, प्रेम और सद्भावना का होना मानवीय चरित्र का ही द्योतक है। तेरा-मेरा, अपना-पराया और इनकी-उनकी जैसी स्वार्थ की भावनाओं से हम ऊपर उठकर और सबके कल्याण और सुख-शांति की कामना करते हुए जीवन को आगे बढ़ाते जाएं। इससे जहां अपना भी भला होता है, वहीं पर दूसरों का भी कल्याण होता जाता है। सभी धर्मग्रंथों और दर्शनों में विश्व कल्याण की बात बताई गई है। धर्म वही है, जिससे सबका भला होता है। अपनी भलाई में जो दूसरों की भलाई देखता है, वह 'विश्वमानव' हो जाता है। उसके लिए अपने-पराए और स्वार्थ की भावना किसी भी स्तर पर नहीं होती है। यही तो मनुष्य का कर्तव्य और कर्म होना चाहिए कि केवल अपने बारे में न सोचे, बल्कि सबके बारे में अच्छा सोचे और अच्छा करने का स्वभाव बनाए। जैसे ब्रह्म में सारा विश्व एक नीड़ के समान एकाकार हो जाता है, वैसे ही हमारी मन की आंखों में सारा मानव समाज अपना सहोदर जैसा हो जाए, तो जीवन का सच्चा मकसद पूरा हो जाता है। यह शुभता, विश्वभावना की धारा का आधार है। हम रोजाना ईश्वर से प्रार्थना करें कि हे ईश्वर हमारा स्वभाव, कर्म व्यवहार और बुद्धि कभी स्वार्थ से प्रेरित होकर एकांगी न हो। हमारे रोम-रोम में परोपकार की विश्वभावना हर पल बनी रहे। हमारी हर इंद्रिय उत्तम धारा में कार्य करने वाली हो। जैसे हम परिवार के सदस्यों के प्रति हमेशा कृतज्ञता और शुचिता का भाव बनाए रखते हैं, वैसा ही भाव हम विश्व के प्रत्येक व्यक्ति के प्रति बनाएं रखें। इससे हृदय में हर पल पवित्रता का भाव बना रहेगा। किसी से न नफरत की भावना होगी और न किसी से असत्य भाषण ही करेंगे। करुणा, दया, प्रेम, सहिष्णुता और सदाशयता की भावना भी लगातार बढ़ती जाएगी।

पहाड़ों में रहने वाले लुप्तप्राय गोरिल्ला को इबोला से खतरा

जोहानसबर्ग। अध्ययन के मुताबिक, अफ्रीका के पहाड़ों पर रहने वाले 20 प्रतिशत से भी कम लुप्तप्राय गोरिल्लाओं के इबोला वायरस से संक्रमित हो जाने पर इनके मात्र 100 दिनों तक जीवित रहने के आसार हैं। अध्ययन के अनुसार रवांडा, युगांडा और कांगो लोकतांत्रिक गणराज्य में रहने वाले पर्वतीय गोरिल्लाओं के बीच इबोला वायरस के प्रकोप का सिमुलेशन किया है। इसके प्रभावों को जानने के लिए कंप्यूटर मॉडलिंग का उपयोग किया गया।

अध्ययन में पाया गया कि इस तरह के घातक प्रकोप लुप्तप्राय गोरिल्लाओं की आबादी को कम कर सकता है, वर्तमान में इनकी संख्या 1,000 से कुछ ही अधिक है। यह अध्ययन स्मिथसोनियन इंस्टीट्यूशन से जुड़े शोधकर्ताओं के साथ-साथ गोरिल्ला डॉक्टर्स के वैज्ञानिकों द्वारा आयोजित किया गया था, जो कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, डेविस पर आधारित है। अध्ययन में कहा गया कि, जांच की गई कोई भी टीकाकरण रणनीति बढ़ते संक्रमण को तेजी से नहीं रोक पाएगी। मॉडल ने पता लगाया कि पहले संक्रमित होने वाले गोरिल्ला ... तीन सप्ताह के भ... आधे गोरिल्लाओं ... करके 50 फीसदी ... के जीवित रहने ... जा सकती है।

इबोला अत... संक्रमण- साल ... जंगली गोरिल्ला ... के कोई मामले न... इबोला मौजूद है ... अफ्रीका में घूम रहे ... मानव-वन्यजीव सम्पर्क वाले इलाकों में इसके फैलने की चिंता बढ़ गई है। अध्ययनकर्ता और गोरिल्ला डॉक्टर्स के कार्यकारी निदेशक कर्स्टन गिलार्डी ने कहा, हम बहुत भाग्यशाली रहे हैं कि आज तक इबोला वायरस ने पर्वतीय गोरिल्लाओं को प्रभावित नहीं किया है। लेकिन पहाड़ों पर रहने वाले गोरिल्ला की आबादी में प्रवेश करने वाले इबोला वायरस के खतरों को कम करने के लिए सतर्क रहने, निगरानी और आकस्मिक योजना की जरूरत है। हम इन निष्कर्षों को रवांडा, युगांडा और कांगो के वन्यजीव अधिकारियों से उपलब्ध ... पहाड़ों पर रहने वाले गोरिल्लाओं की आबादी राष्ट्रीय उद्यानों, वन %द्वीपों% में अलग-अलग है, जो अफ्रीका में कुछ भारी मानव जनसंख्या घनत्व से घिरे हैं। हम जानते हैं कि गोरिल्ला मानव रोगजनकों के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं।

मनुष्यों से गोरिल्लाओं में संक्रमण के फैलने का बहुत बड़ा खतरा है। यह अध्ययन पहाड़ों में रहने वाले गोरिल्लाओं के 50 फीसदी का पहले से टीकाकरण करने या आबादी में इबोला के पहले पता लगाने पर टीकाकरण के लिए तैयारी करने के लिए अहम है। ... संक्रमण को ... यह आबादी ... दर को 50 ... कता है।

...का पूर्वानुमान ... में आउटब्रेक ... तेमाल किया ... -सोर्स टूल है ... गवादियों को ... तिकी तंत्र में ... का पूर्वानुमान ... करता है। वैज्ञानिकों ने होने वाले खतरों का आबादी पर प्रभाव की जांच की, इसमें देखा गया कि यदि एक अकेला गोरिल्ला इबोला वायरस से संक्रमित होता है तो बाकियों पर इसका कितनी तेजी से कितना असर पड़ेगा।

प्रजाति संरक्षण के अध्ययनकर्ता रॉबर्ट लेसी ने कहा, सीमित आंकड़ों के कारण वन्यजीवों के रोग मॉडलिंग में मानव या पशुधन आबादी की तुलना में अलग तरह की चुनौतियां हैं। इस प्रकार के अभ्यास बीमारी से होने वाले खतरों के प्रति हमारी समझ बढ़ा सकते हैं और आबादी प्रबंधन रणनीतियों और हस्तक्षेपों को जानकारी दे सकते हैं। यह विशेष रूप से तब उपयोगी होता है जब एक छोटी सी आबादी वाले लुप्तप्राय प्रजातियों का प्रबंधन किया जाता है जो उच्च मृत्यु दर वाले रोगों के खतरों में होते हैं। यह अभ्यास संक्रामक रोग का पता लगाने के लिए तैयारियों के महत्व और वन्यजीव आबादी की निरंतर निगरानी करने के लिए जरुरी है। जैसे-जैसे लोगों की जनसंख्या बढ़ रही है और भूमि उपयोग के पैटर्न में बदलाव हो रहा है यह वन्यजीवों पर दबाव और खतरों को बढ़ाते जा रहे हैं। इस तरह के भविष्य का अनुमान लगाने वाले मॉडल वन्यजीवों को विनाशकारी बीमारी के प्रकोप से बचाने के लिए मौजूदा रणनीतियों और सहयोग को मजबूत करने में मदद कर सकते हैं। यह अध्ययन साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है।

निजी हाथों में हैं भारत के 55.2 फीसदी जल निकाय, 38,496 पर हो चुका है अतिक्रमण

नई दिल्ली। देश में 55.2 फीसदी जल निकाय जैसे तालाब, झीलें, चेक डैम आदि निजी हाथों में है। इन जल निकायों की कुल संख्या 13,38,735 है। वहीं 44.8 फीसदी जल निकाय सार्वजनिक क्षेत्र में हैं, जिनपर ग्राम पंचायत या राज्य सरकार का स्वामित्व है। यह जानकारी जल शक्ति मंत्रालय द्वारा जल निकायों की पहली गणना पर जारी रिपोर्ट में सामने आई है।

अपनी इस रिपोर्ट में सरकार ने जल निकायों से जुड़े सभी महत्वपूर्ण मुद्दों जैसे उनके आकार, स्थिति, उपयोग, जल भंडारण क्षमता आदि को शामिल किया है। इतना ही नहीं यह पहला मौका है जब इन जल निकायों पर हुए अतिक्रमण से जुड़ी जानकारियों को साझा किया गया है। गौरतलब है कि इस रिपोर्ट में 24.2 लाख से ज्यादा जल निकायों का अध्ययन किया है, जिनमें से 97.1 फीसदी यानी 23,55,055 जल निकाय ग्रामीण क्षेत्रों में हैं, जबकि केवल 2.9 फीसदी झीलें और तालाब शहरों में स्थित हैं, जिनकी कुल संख्या 69,485 है। आंकड़ों के मुताबिक 9.6 फीसदी (2,32,637) जल निकाय आदिवासी बहुल इलाकों में हैं। वहीं दो फीसदी नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में हैं।

रिपोर्ट के अनुसार देश में कुल जल निकायों में से 59.5 फीसदी तालाब है, जबकि 15.7 फीसदी टैंक, 12.1 फीसदी जलाशय और 9.3 फीसदी चेक डैम हैं। वहीं केवल 0.9 फीसदी झीलें हैं। 16.3 फीसदी यानी करीब 3,94,500 जल निकाय ऐसे हैं जिन्हें उपयोग नहीं किया जा रहा है। ऐसे में यदि उनपर ध्यान न दिया गया तो वो जल्द खत्म हो सकते हैं। केवल 1.7 फीसदी ऐसे हैं जो 50 हजार या उससे ज्यादा लोगों की जरूरतों को पूरा कर रहे हैं, जबकि 90 फीसदी से ज्यादा ऐसे हैं जो केवल 100 लोगों की जरूरतों को ही पूरा कर पा रहे हैं। रिपोर्ट में इन जल स्त्रोतों पर बढ़ते अतिक्रमण को लेकर भी गंभीर तस्वीर प्रस्तुत की गई है। जारी आंकड़ों के मुताबिक देश में करीब 1.6 फीसदी (38,496) जल निकाय अतिक्रमण का सामना कर रहे हैं। इनमें से 95.4 फीसदी जल स्त्रोतों पर अतिक्रमण ग्रामीण क्षेत्रों में हुआ है, जबकि अतिक्रमण को झेल रहे 4.6 फीसदी जल निकाय शहरों में है। पता चला है कि अतिक्रमण किए गए 62.8 फीसदी जल निकायों के 25 फीसदी से कम हिस्से पर अतिक्रमण हुआ है। वहीं 11.8 फीसदी जल निकाय ऐसे हैं जिनके 75 फीसदी से ज्यादा हिस्से पर अतिक्रमण हो चुका है। देश में कई झीलें अतिक्रमण का सामना कर रही हैं। ऐसे अनेक उदाहरण है जिनमें इनके बचाव के लिए कई बार कोर्ट को भी सामने आना पड़ा है। आपको जानकार हैरानी होगी की देश में 78 फीसदी जल निकाय मानव निर्मित हैं, जबकि केवल 22 फीसदी (5,34,077) प्राकृतिक हैं। यदि इनकी क्षमता को देखें तो 50 फीसदी जल निकायों की भण्डारण क्षमता एक हजार से दस हजार क्युबिक मीटर के बीच है।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008